आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 6/अंक 2/जून 2026

Received: 19/06/2026; Revised: 22/06/2026; Accepted: 24/06/2026; Published: 28/06/2026

भ्रमरगीत-काव्य परंपरा में ज्ञान और भक्ति

(आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के भ्रमरगीत-चिंतन के संदर्भ में)

[1]संदीप कुमार

पी.एच.डी.शोधार्थी, हिंदी विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला
एवं

[2]डॉ.आशुतोष कुमार

शोध निर्देशक एवं हिंदी के सहायक आचार्य
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
सांध्यकालीन अध्ययन विभाग शिमला

tryambakdutt@gmail.com

[1]संदीप कुमार, [2]डॉ.आशुतोष कुमार, भ्रमरगीत-काव्य परंपरा में ज्ञान और भक्ति, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 6/अंक 2/जून 2026**,(192 -199)

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

https://doi.org/10.5281/zenodo.21441430

अनुरूपी लेखक : [1]संदीप कुमार, पी.एच.डी.शोधार्थी, हिंदी विभाग , हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला

सह लेखक **[2]डॉ.आशुतोष कुमार,** शोध निर्देशक एवं हिंदी के सहायक आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय सांध्यकालीन अध्ययन विभाग, शिमला

सारांश

भ्रमरगीत-काव्य परंपरा, साहित्यिक पद्धति से ज्ञानमार्ग पर प्रेममार्ग की श्रेष्ठता का अनूठा निर्वचन है। उद्धव ज्ञानमार्ग के उपासक हैं। उन्हें गोपियों के भक्तिमार्ग की अपेक्षा, अपना ज्ञानमार्ग श्रेष्ठ लगता है। भक्तिमार्ग या ज्ञानमार्ग, दोनों में ईश्वरोपासना की कौन-सी पद्धति लोक हेतु उत्तम है, यह इसका केंद्रीय प्रश्न है। भ्रमरगीत में यही प्रश्न, द्वंद्व का कारण है। भ्रमरगीत-काव्य परंपरा में ज्ञान-योग मार्ग को जटिल एवं नीरस बताकर, उसे भक्ति का स्वाभाविक पथ नहीं बताया गया है। जबकि भक्ति-प्रेममार्ग को सरल तथा सरस घोषित करके, उसे भक्ति का लोक-पथ कहा गया है। यह प्रसंग काव्यकारों के लिए नवीन उद्भावनाओं का कारण है। भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिककाल के कवियों को भी यह संवाद बहुत प्रिय रहा है। अद्यावधि तक इसका अविरत पल्लवन इसके महत्त्व को इंगित करता है। सगुण-निर्गुण के इस विवाद में, ज्ञान-योग मार्ग के खंडन एवं अस्वीकार्यता के मुख्य कारणों को ज्ञात करना, इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

इस शोध पत्र के प्रथम भाग में भ्रमरगीत-काव्य परंपरा का संक्षेप में परिचयात्मक विश्लेषण है। द्वितीय भाग में विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के भ्रमरगीत विषयक चिंतन का उल्लेख है। तृतीय भाग में ज्ञान एवं भक्ति मार्ग के द्वंद्व के कारणों को खोजने का प्रयास है। अध्ययन हेतु विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है।

बीज शब्द: भ्रमरगीत-काव्य परंपरा, ज्ञान-योग, भक्तिमार्ग, प्रेममार्ग, सगुण-निर्गुण, प्रवृत्तिमार्ग-निवृत्तिमार्ग।

)i(

भ्रमरगीत प्रसंग श्लोकों में 21 से 12 वें अध्याय के 49 के दसवें स्कंध के 'श्रीमद्भागवत'वर्णित है। सबसे पहले गोपी-उद्धव संवाद की मौलिक उद्भावना में हुई है। एक गोपी के पाँव पर बैठा 'श्रीमद्भागवत' षट्पदकृष्ण को जली ,-कटी सुनाने का अवलंब बनता है। अतभागवतकार ने भ्रमर में रसिक पुरुष की सभी : उसे प्रतीक रूप में चुना। इसलिए इस प ,प्रवृत्तियों को देखते हुए्रसंग का नामकरण प्रतिष्ठित 'भ्रमरगीत' हुआ।

भागवतकार के ,के दो प्रयोजन हैं। पहला 'भ्रमरगीत'नंद-यशोदा को कृष्ण का सुखदसमाचार -गोपियों की वियोग जनित स्थिति का निराकरण -उन्हें प्रसन्नचित एवं संतुष्टि प्रदान करना। दूसरा ;सुनाकर -उन्हें दिलासा देना। ज्ञान ,करकेभक्ति में द्वंद्व दिखानाउ ,नका लक्ष्य नहीं है।

सूरदास भी उक्त कथानक को में 'भ्रमरगीत' से ही लेते हैं। लेकिन सूरदास ने 'श्रीमद्भागवत' -भक्तिमार्ग को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध किया है। उनकी अन्तर्दृष्टि भक्ति ,ज्ञानमार्ग के द्वन्द्व को दिखाकर-भक्तिमार्ग केंद्रित है। इसलिएप्रवण-सूर की ब्रजबालाएँ भाव , हैं। तर्क उनको आता नहीं। उनके नैष्ठिक भावप्रवाह में -परवर्ती भ्रमरगीत रचनाकारों ,उद्धव के तर्क ठहर नहीं पाते हैं। इस प्रकार लीक से हटकर उनका भ्रमरगीत के लिए प्रेरणादायी सिद्ध हुआ।

नंददास भी उपर्युक्त कथ्य को आधार बनाकर' भँवरगीतनामक ' काव्य की रचना करते हैं। अष्टछाप के कवि नंददास कृष्णवस्तु का आधार -अपनी वर्ण्य ,योग और भक्ति के द्वंद्व को-भक्त हैं। इन्होंने भी ज्ञान-' बनाया। लेकिन उनकेभँवरगीत' में भाव की अपेक्षातर्क को प्रधानता दी गई है। इनकी गोपियाँ शास्त्रों में , निष्णात् एवं तार्किक हैं। वे उद्धव के निर्गुणभाँति करती हैं। उद्धव -भली ,ज्ञान तथा योग के तर्कों का खंडन--यहाँ भी भक्ति के समक्ष ज्ञान की पराजय दिखलाई गई है ,को निरुत्तर करके

कौन ब्रम्ह", को जोति ग्याँन कासों कहै ऊधौ?

हमरे सुंदर-स्याँम प्रेम कौ मारग'"सूधौ।-

यदि रीतिकालीन कवियों की ओर निहारा जाए तोपरंपरा का निर्वाह फुटकल 'भ्रमरगीत' उनमें , रूप में ही देखने को मिलता है।ये फुटकल रचनाएँकवित्त तथा दो ,हा छंद में निबद्ध मिलती हैं। जिसे वे अलंकार तथा रसनिरूपण ग्रंथों की रचना करते समय लिख देते थे। ब्रजबालाओं का वियोगचित्रण इनको - अभीष्ट था। जिसका प्रस्तुतिकरण अलंकारों के उदाहरणों के रूप में द्रष्टव्य है। रहीम, मतिराम, देव, पद्माकर, सेनापति, भिखारीदास, घनानंद, हरिराय, पजन कुँवरि आदि द्वारा इस परंपरा का निर्वाह किया गया है। कवि देव की गोपियों को योगमार्ग की बातें इतनी असह्य हैं कि उनका शरीर मानो योग की बातें सुनकर जल उठता है -

"जोग की सुनत बात गात ज्यों जरत हैं। 2"

आधुनिक काल में सर्वश्रेष्ठ भ्रमरगीत जगन्नाथदास को माना जाता 'उद्धव शतक' विरचित 'रत्नाकर' योग और प्रेम का-है। जिसमें ज्ञान संघर्ष तो है ही ,साथसाथ- कृष्ण के पीड़ित हृदय का वर्णन भी इसमें मिलता है। उद्धव यहाँ केवल नीरसता भरे तर्कों पर आश्रित नहीं हैबल्कि उसमें भक्ति तथा प्रेम के ग्रहण की , प्रेम की विजय ,अभिलाषा भी है। ब्रजभाषा का यह काव्य भी ज्ञान की बातों को अर्थहीन बताता हुआ की घोषणा करता है। रत्नाकर की गोपियाँ भी वाक्चातुर्य और तर्कपद्धति में कुशल हैं -

एक ही अनंग साधि साध सब पूरीँ अब"

और अंग-रहित अराधि करिहैँ कहा।।3"

' का 'कविरत्न' जी के प्रियप्रवास में यह प्रसंग संक्षेप में है। सत्यनारायण 'हरिऔध'भ्रमरदूत' क्रमागत कथा से अलग है। इनके 'भ्रमरदूत' में भ्रमर यशोदा का दूत है। उद्धव का वर्णन इसमें नहीं है। ,इस प्रकार यह सहजता से लक्षित किया जा सकता है कि छिटपुट रूप में यह प-ृरसंग भक्तिकाल से आधुनिककाल तक कई कवियों द्वारा वर्णित है। उक्त विषय में काव्योपयोगी व्यंजना होने के कारणकवियों ने इसके प्रवाह को -भक्त , भक्ति की ओर मोड़ने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है।

)ii(

तत्कालीन समाज कबीर आदि संतों के उपदेशों से प्रभावित था। ज्ञान योग-का कोरा प्रभाव सर्वसामान्य को आकर्षित कर रहा था। इस साधनाजनसाधारण ,पद्धति की बारीकियों को जाने बिना- ' वे अहंकारवश ज्ञानियों से शास्त्रार्थ करने लगे। मिश्र जी :पंडित बन गए। फलतभ्रमरगीत' की उत्पत्ति का हेतुको म 'तत्कालीन उद्वेगजनक प्रवृत्ति' इसी लोकविरोधी ,ानते हैं। जिसके परिहार को सूरदास ने यह प्रसंग चुना। उनका कहना है कि, उद्धव के योग एवं ज्ञान का जो प्रतिकार गोपियों ने सूरसागर में किया " वह सूर की ही योजना है। श्रीमद्भागवत में, जिनकी स्थूल कथा के आधार पर सूरसागर रचा गया, यह विधान है ही नहीं। उद्धव के ब्रज जाने, उपदेश देने, भ्रमर के आने और उसे खरी-खोटी सुनाने का वृत्त तो वहाँ है पर गोपियों द्वारा ज्ञान या योग का विरोध नहीं।4"

यद्यपि कबीर के समाज सुधार वाले रूप से उनका कोई विरोध नहीं है।-उनकी दृष्टि में सामाजिक वैषम्य को नष्ट करने के लिए हीकबीर की प्र ,शंसा के पुल बाँधे गए हैं। उनकी चिंता का कारण हैकबीर के , उपदेशों में संसार को त्यागने की शिक्षा। कबीर का मार्गोपदेश निवृत्तिमूलक था। लोकवृत्ति का विरोध मिश्र सामाजिक व्यवस्था के लिए घातक थी। ,जी उसमें देखते हैं। विशेषकर स्त्रियों के लिए इस प्रकार की शिक्षा

स्त्रियों में अवतारवाद के प्रति अविश्वास पैदा होने लग गया था। स्त्रियाँ भक्ति के सहज पथ से विचलित न होसूर ने निवृत्तिमार्गोपदेश के ही " ,में गोपियों को ज्ञान के विरुद्ध बताया है 'भ्रमरगीत' इसीलिए सूर ने , इसी से सूरदास ने निर्ग...कारण निर्गुणपंथ का विरोध किया।ुणपंथ के प्रतिनिधि उद्धव के प्रतिपक्ष में गोपियों को खड़ा किया है।[5]"

मिश्र जी का निर्गुणोपासना के प्रति मत संकीर्ण नहीं है। उनकी स्वीकृति है कि उपनिषद्काल से ही - निर्गुण उपासना मार्ग स्वीकृत थे। भारत में भक्तिमार्ग प्रवृत्तिमुखी था औ-भारत में ब्रह्म के सगुणर स्वतही : ;कब विकर्षण हो गया ,यथोचित समय पर निवृत्तिमार्ग का उसमें प्रवेश हो जाता था। जगत का आकर्षण इसकी ओर किसी का प्रयत्न नहीं होता था। इसीलिए 'श्रीमद्भागवत' में निर्गुण का खंडन नहीं है। लेकिन सूफियों के आगमन से भारतीय परिवेश में निर्गुणवाद की ऐसी लहर चली कि सगुणवाद का तीव्र विरोध होने लगा। सूफियों का प्रेममार्ग रहस्यवादी था। मिश्र जी इस रहस्यवाद का प्रभाव कबीर आदि संतों के ज्ञानमार्ग पर स्वीकार करते हैं। उनका मत है कि मध्यकाल में ही यह संस्कृति पनपी। तभी अष्टछाप के समस्त कवि सगुण की महिमा का गायन करते हैं और निर्गुण का प्रतिवाद। गार्हस्थ्य-जीवन पर इस लोक-मार्ग कहना पड़ा 'अवैदिक' तुलसी को भी इसे ,विरोधी मार्ग के अनिष्ट प्रभाव को देखते हुए ही -

साखी" सबदी दोहरा कहि किहनी उपखान।
भगत निरूपहिं भगति कलि निंदहिं बेद पुरान।। [6]"

मिश्र जी भारतीय दृष्टि से भक्ति ज्ञान और कर्म के स्वरूप का ,चिंतन करते हुएतीनों के अस्तित्व को ; स्वीकार करते हैं। भारतीय परिवेश में भक्ति की साधना को सरल कहा गया है। जबकि ज्ञान और कर्म की साधना को कठोर। ज्ञानमार्ग ,अल्पज्ञान रखने वालों के लिए दुष्कर है। इसकी प्रवृत्ति अंतर्मुखी होने से , ,इसकी रहस्यात्मकता उलझने बढ़ाती है। मिश्र जी की दृष्टि में तभी सूर ने कहा है"निर्गुन अगम बिचारहि तातें सूर सगुन[7]"लीलापद गावै।- यही कारण है कि बुद्ध की पूजा इस देश मेंकृष्ण जैसी न हो सकी-राम , और मध्यममार-्ग गृहस्थ जीवन में प्रवेश न पा सका। सूर और तुलसी ने गृहस्थों के लिए-ऐसे हँसते , ;खेलते भगवान् की साधना का मार्ग प्रस्तुत किया जिसके लिए गृहस्थों को संन्यासी बनकरसंसार से , पलायन की आवश्यकता नहीं थी। एक ओरवे कहते हैं कि कबीर ,को ही प्रभावित कर सके 'जीवनांश' साहित्य को नहीं। दूसरी और उन्होंने यह माना कि सूफियों ने सिर्फ़ 'साहित्यांश' को ही प्रभावित किया। वैसे भी मिश्र जी कोरी उपदेशात्मक या ज्ञानात्मक वृत्ति को साहित्य का अंग नहीं मानते। इसीलिए सरस साहित्य की दृष्टि से उन्होंने सूर और तुलसीदास में से सूर को ही चुना है। उनके मत में समाज को सबसे ज्यादा तुलसीदास ही प्रभावित करते हैं, लेकिन उपदेशात्मक वृत्ति से साहित्य तत्त्व वहाँ अपेक्षानुरूप प्रस्फुटित नहीं हो सका है। उन्होंने साहित्य के लिए शृंगार तत्त्व को आवश्यक माना। साहित्य तत्त्व का वर्धमानवे सूरदास में दे ,खते हैं,राम का चरित स्वयं काव्य भले ही हो पर रामचरितमानस की परंपरा " कहाँ है। जीवन ने उपदेशामृत का पान किया, पर साहित्य ऊँघने लगा। वह श्रद्धा का नहीं, शृंगार का आलंबन चाहता था। वह [8]"में जा डूबा। 'सागर' के बदले 'मानस'उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि मिश्र जी ने अपने आलोचनाकर्म में भ्रमरगीत काव्य-परंपरा में निहित ज्ञान और भक्ति के द्वंद्व की विधिवत पड़ताल की है।

)iii(

अद्वैतवादी शंकराचार्य के अनंतर वाममार्गियों के ,संप्रदाय, यथा- नाथपंथीकापालिक ,अघोरी , और तथाकथित योगी आदि प्रबल हो उठे और योगमार्गी कष्टकारक साधना पद्धति द्वारा ईश्वर प्राप्ति के उपदेश देने लगे। सिद्धों की पंचमकारों की साधना के अनुकरण सेइनका उपासना मार्ग विकृतियों से भर , गया था। साधारणईश्वरोपासना के असहज मार्ग की ,जन इनकी चमत्कारिक शक्तियों से प्रभावित होकर- ओर बढ़ रहा था। मिश्र जी का यह तर्क सही ही है कि तद्युगीन समाज में सूर को यह लोकविरोधी धारा खटकी और सूरदास ने लोकवृत्ति की रक्षा हेतु -सगुण मार्ग की सहजता का प्रतिपादन किया ,"उस समय भी वैष्णव भक्ति को सन्तों के भाषावाद के प्रचार, अद्वैतवाद के आतंक, नाथ योगियों के दर्शन और निर्गुणवादियों की अवतार विरोधी व्याख्या में संघर्ष करना पड़ा था। सूरदास ने भ्रमरगीत के माध्यम से भक्ति मार्ग की सरलता और सहजता का प्रतिपादन किया है। [9]"

यह तो निर्विवाद ही है कि पूर्वनिर्गुण विचारधाराओं में वैचारिक टकराहट तो -मध्यकाल में सगुण- सगुण ,थी ही। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी का मत भी यही है कि सोमनाथ का मंदिर टूटने और लूटने से ईश्वर के प्रति लोगों में अनास्था का भाव जाग रहा था। क्योंकि जो भगवान् अपनीही रक्षा महमूद गजनवी से नहीं कर पाया था। वह उनकी रक्षा कैसे करताइसलिए भी कबीर के निर्गुण ईश्वर के प्रति जनता का ? झुकाव बढ़ता जा रहा था। उनके मत को बहुत समर्थन मिला। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि विरोध विकृत ज्ञान का नहीं। चाहे कबीर कवि न ,उपासना मार्ग का हैहों। उनकी बानी अटपटी हो पर उनका ज्ञानमार्ग विकृत नहीं है। अन्यथा शुक्ल जी ज्ञानमार्गी कबीर के बारे में ऐसा न लिखते -"कबीर ने ठीक मौके पर जनता के उस बड़े भाग को सँभालाजो नाथपंथियों के प्रभाव से प्रेमभाव और भक्तिरस से शून्य और शुष्क पड़ता , जा रहा था। उनके द्वारा यह बहुत ही आवश्यक कार्य हुआ। [10]"

आचार्य शुक्ल और आचार्य मिश्र जी जो कबीर पर सूफी साधना का प्रभाव बतलाते हैं। उसका , खंडन विष्णुकांत शास्त्री जी विभिन्न मतों तथा उपनिषदोंकबीरदास ' गीता और मान्य ग्रंथों के आधार पर , 'के मूल स्वरूप पर पड़े आवरण विषयक लेख में करते हैं ,"आचार्य शुक्ल और उन्हीं का अनुगमन करने वाले हिंदी आलोचक सूरदासतुलसीदास आदि को रहस्यवादी कहना अनुचित ,, असंगत मानते हैं। फिर कबीरदास कैसे रहस्यवादी हो गए?...उपनिषदों मेंगीता में तथा अन्य मान्य ग्रंथों में सगुण साकार भगवान् , साथ-की भक्ति के साथ अव्यक्त निराकार परमात्मा की भक्ति का भी निरूपण किया गया है।आचार्य शुक्ल ... [11]"का यह कथन अस्वीकार्य है कि निराकार परमेश्वर की भक्ति कबीर को सूफ़ियों से ही मिली थी।

इस प्रकार मिश्र जी ज्ञानयोग के प्रतिकार की जो बात सूरदास के भ्रमरगीत में स्वीकार- करते हैं। वह सिद्धों या वाममार्गियों का विकृत या चमत्कारिक पथ तो हो सकता है कबीर या भारतीय ,परंपरा की ज्ञान,पद्धति का नहीं। हाँ- लोक से विमुख होने के उपदेश, समाज के विकास में अवरोधक तो हैं। मिश्र जी का यह प्रबल तर्कसाहित्य पर पूर्ण रूप से लागू नहीं होता है क्य-संत ,ोंकि संतसाहित्य समाज से पूर्ण रूप से- कटा हुआ नहीं है।

विचारणीय बात यह भी है कि भारतीय परिवेश में कविता की मार्मिक व्यंजना करुण रस के माध्यम से मानी गई है। वाल्मीकि जी के लिए क्रौंचश्लोक ,वध का शोक- में पर्यवसित हुआ। यहाँ गोपियाँ कृष्णविरह में पीड़ित ह-ैं। जबकि सगुण निर्गुण-पर मतांतर भारतीय समाज में पहले से ही व्याप्त था। कहने का अभिप्राय यही है कि निर्गुण-खंडन से ज्यादाव्यंजना हेतु इस विषय का प्रयोग कवियों द्वारा -काव्य ,

-अधिक किया गया है। वाजपेयी जी का मत है"गोपियों के उत्तर में केवल कृष्ण के प्रति उत्कट अनुराग की ही सर्वत्र व्यंजना है[12]"निर्गुण के खण्डन का उपक्रम उतना नहीं। ;

एक अन्य कारण सूरदास की प्रेमाभक्ति भी है। उनके द्वारा ज्ञान का प्रतिकारप्रेमाभक्ति पर चोट की , ज्ञानाश्रित नहीं। दूसरी ओर उपालंभ ,प्रतिक्रिया है। उनका भ्रमरगीत अनुभूति आश्रित हैघृणा का रूप न होकर, प्रेम की अभिव्यक्ति का ही एक रूप है। सूर को वह ज्ञान कतई प्रिय नहीं हैं जो भक्ति को हीन बताए। आचार्य शुक्ल का कथन अत्यंत समीचीन है वे ज्ञान के विरोधी नहीं" -, भक्ति-विरोधी ज्ञान के विरोधी हैं। [13]"

मूलतः एक प्रमुख कारण यह भी है कि प्रेम को भारतीय आध्यात्मिक ग्रंथों में एक रस, सूक्ष्म , प्रेम के समक्ष ज्ञान को ,प्रतिपल नवीन और बढ़ने वाला बताया गया है। इसलिए भक्त एवं प्रेमी सृजेताओं ने शुष्क बतलाया है। भारतीय जीवन पद्धति और साहित्य रसमय दृष्टिकोण को प्रमुख मानता है। भारतीय काव्यशास्त्रीय परंपरा में रस को काव्य की आत्मा कहा गया है। सगुण भक्ति को मूर्त रूप और इंद्रियों का विषयानंद रसीला बनाता हैरस" ,-विहीन उपदेश से लोक-व्यवहार कैसे चल सकता हैरसविहीन उपदेश ? किस प्रकार असर नहीं करते, यही दिखाने को भ्रमरगीत की रचना हुई है।[14]"

बहरहाल, भक्ति एवं प्रेम द्वैत के व्यवधान पर आश्रित हैअद्वैत का विधान वहाँ चल नहीं सकता। , योगश्च ' । योगशास्त्र कहता है'कैसे समायँगे एक म्यान दो खाँड़े' - तभी तो गोपियाँ उद्धव से कह उठती हैं :चित्तवृत्तिनिरोध' किन्तु जिनके यहाँ स्थिति कुछ ऐसी हैमोहि निमिष न बिसर' ,त मोहन मूरति सोवत जागत', यहाँ योग का प्रवेश दुर्लभ है। अतगोपियों को जबरन ज्ञान को ,रस चखाने हेतु-सहृदय को काव्य : ग्रहण करने के लिए विवश किया जाता है। इस विषय में प्रभाकर श्रोत्रिय का कथन है ,"सूर का मन प्रेम में डूबा था और योगमार्ग ज्ञान प्रधान था। प्रेम के अभाव में उन्होंने योगमार्ग को नामंजूर कर दिया था। [15]"

हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का तर्क भी यही है कि सूरदास और नंददास ने प्रेम मार्ग को श्रेष्ठ दिखलाने के लिए -ग्रंथों में ज्ञान की अपेक्षा प्रेम को स्थापित किया है-अपने काव्य ,"इन संवादों में ज्ञान की अपेक्षा प्रेम का मार्ग सहज और महान् बताया गया है। योग और निर्गुण उपासना की जगह सगुण उपासना की महिमा प्रतिष्ठित की गयी है। [16]"

एक बात तो निश्चित है कि अधिकतर सगुण भक्त कवियों ने भक्ति की श्रेष्ठता दिखाने हेतु इस प्रसंग को काव्य का विषय बनाया। दूसरा श्रीकृष्ण के लीलावादी रूप का प्रभाव भारतीय जनमानस के ऊपर गहरा होने के कारण निर्गुण के ,खंडन को आसानी मिली। भ्रमरगीतकारों में अधिकतर कवि सगुण भगवान " [17]"की उपासना करने वाले थे। इन कवियों ने ज्ञान की अपेक्षा प्रेम और भक्ति को महत्त्व दिया है। शुक्ल जी का भी मन्तव्य है कि की रचना का मूल उद्देश्य प्रेम का अवस्थापन है। ज्ञान का मार्ग इसके 'भ्रमरगीत' पूर्ति हेतु प्रति-उसे काव्य की लक्ष्य ,विपरीत होने के कारणद्वंदी बनाया गया है। ज्ञान की हार जीत और-खंडन की बातें भ्रामक हैं -"भारतीय भक्तिमार्ग साकार और सगुण रूप को लेकर चला था, निर्गुण और निराकार ब्रह्म भक्ति या प्रेम का विषय नहीं माना जाता। [18]"

भ्रमरगीतों के स्वरूपआदि 'रत्नाकर' नंददास तथा ,सूरदास ,विश्लेषण से ज्ञातव्य है कि भागवतकार-पुष्टि' अपनी उद्देश्य के अनुरूप कथ्य को अभिव्यंजित किया है। सूरदास और नंददास पर-ने अपनीसंप्रदाय ' व्यंजना हेतु ही-का प्रभाव भी है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि काव्यकारों ने इस विषय को मार्मिक विभिन्न रूप प्रदान किए हैं। जैसा कि हरदेव बाहरी का अभिमत है -"सूर का भ्रमरगीत साम्प्रदायिक

भावभूमि पर पल्लवित होकर सगुणज्ञान तथा भक्त ,वादों और कर्म-निर्गुण-ि मार्गों के सिद्धान्तों के शास्त्रार्थ के साथ ध्वनि [19]"काव्य का आदर्श बन गया है।-

निष्कर्ष सगुण और निर्गुण ईश्वर के दो रूप हैं। :श्रीमद्भगवद्गीता में भक्ति, ज्ञान और प्रेम मार्ग की महत्ता का वर्णन है। वैदिक और शास्त्रीय ग्रंथों आदि सब में ज्ञान की महिमा वर्णित है। योगमार्ग पुरातन काल से भारतीय परंपरा और संस्कृति का अभिन्न अंग है। उपर्युक्त के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि काव्य की विषय ;वस्तु को मनोरंजक बनाने और तथाकथित ज्ञानियों के दुष्प्रचार से जनता को बचाने हेतु-योग मा-भ्रमरगीत काव्य परम्परा में ज्ञानर्ग का खंडन तीव्र संवेदनशीलता के साथ किया गया है। उपर्युक्त काव्य-परंपरा में ज्ञान एवं योग मार्ग को फीका बतलाने का अन्य कारणभक्तिमार्ग की स्थापना की , ,महत्त्वाकांक्षा भी है। ज्ञानी स्थावरजंगम जगत को मिथ्या कहते हैं क्योंकि उनका ब्रह्म निर्लेप और -इसे अस्वीकार्य ,पक्ष की अवहेलना के कारण-तत्त्वमसि है। नकार और उपदेशात्मकता की प्रबलता तथा लोक माना गया। इस प्रकार आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के भ्रमरगीत विषयक विश्लेषण में ज्ञान एवं भक्ति मार्ग के द्वंद्व के कारणों को सफलतापूर्वक रेखांकित किया गया है।

संदर्भ सूची :

1. चतुर्वेदी, जवाहरलाल (.सं), भ्रमर-गीत (नन्ददास प्रणीत), गीताप्रेस-गोरखपुर, प्रथम संस्करण , 2019 सम्वत्, पृष्ठ-4
2. शुक्ल, सरला, हिन्दी-साहित्य में भ्रमरगीत की परम्परा, (राजा(रामकुमार-प्रेस, लखनऊ, प्रथम संस्करण:1953, पृष्ठ-27
3. 'रत्नाकर', उद्धव-शतक, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग, संस्करण:1931 , पृष्ठ-45
4. मिश्रआचार्य विश्वनाथ प्रसाद ,, हिन्दी साहित्य का अतीत (प्रथम भाग), वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2014, पृष्ठ-219
5. वही ,पृष्ठ-151
6. वही-पृष्ठ ,247
7. वही
8. वही-पृष्ठ ,218
9. सिंह, डॉ. विजयपालहिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास ,, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, संस्करण:2022 , पृष्ठ-154
10. शुक्ल :संस्करण ,नई दिल्ली ,प्रभात पेपरबैक्स ,हिंदी साहित्य का इतिहास ,आचार्य रामचंद्र , 2021, पृष्ठ-70
11. त्रिपाठी प्रेमशंकर :प्रथम संस्करण ,साहित्य अकादेमी ,संचयन-रचना :विष्णुकांत शास्त्री ,2024 , 108 पृष्ठ- 110

12. वाजपेयी, आचार्य नन्ददुलारेमहाकवि सूरदास ,, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., दरियागंज, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण: 1992, पृष्ठ-167
13. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र (सं), भ्रमरगीत-सार, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2023, पृष्ठ 71
14. वही, पृष्ठ 55
15. श्रोत्रिय, प्रभाकरकवि परम्परा तुलसी से त्रिलोचन ,, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पंचम संस्करण:2018, पृष्ठ-39
16. द्विवेदी, हजारीप्रसादसूर ,-साहित्य, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., दरियागंज, नई दिल्ली, दसवाँ संस्करण: 2024, पृष्ठ- 98
17. शर्मा, डॉ. गजाननभक्तिकालीन काव्य में नारी ,, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1972, पृष्ठ 255
18. शुक्लनई ,प्रभात पेपरबैक्स ,हिंदी साहित्य का इतिहास ,आचार्य रामचंद्र , दिल्ली :संस्करण , 2021-पृष्ठ ,70
19. बाहरी-खण्ड ,सूरसागर सटीक ,संपादन तथा अनुवाद ,राजेन्द्र ,हरदेव तथा कुमार ,1भूमिका ,, लोकभारती प्रकाशन :संस्करण ,प्रयागराज ,2021-पृष्ठ ,4

****